पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

ब्रह्मदेव सहनी

बनाम

बिहार राज्य

2015 की आपराधिक अपील (ख.पी.) संख्या 521

(के साथ 2015 की आपराधिक अपील (ख.पी.) संख्या 418)

22 अगस्त 2023

(माननीय न्यायमूर्ति श्री विपुल एम. पंचोली तथा माननीय न्यायमूर्ति श्री चन्द्र शेखर झा)

विचार के लिए मुद्दा

क्या अभियोजन यह सिद्ध कर सका कि अभियुक्तों का दोष संदेह से परे प्रमाणित करने हेतु परिस्थितिजन्य साक्ष्य की पूर्ण श्रृंखला मौजूद है।

हेडनोट्स

अभियोजन के गवाहों के बयान में गंभीर विरोधाभास, चूक एवं सुधार पाए गए और इसलिए अभियोजन की कहानी संदिग्ध है। घटना का कोई प्रत्यक्षदर्शी नहीं है। (पैरा - 16)

न्यायालय ने अभियुक्तों के समक्ष आरोपित परिस्थितियों को नहीं रखा, जिसके परिणामस्वरूप अभियुक्तों को हानि पहुँची। (पैरा - 26)

यदि अभियोजन एक प्रथमदृष्टया मामला स्थापित करने में असफल रहता है और यह संभावना बनी रहती है कि घटना किसी अन्य प्रकार से घटी हो सकती है, तो अभियुक्त पर

भार नहीं डाला जा सकता और संदेह का लाभ अभियुक्त को ही दिया जाएगा। मात्र 'लास्ट सीन टुगेदर' का उल्लेख, तथ्यों और साक्ष्य के बिना, साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के अंतर्गत अभियुक्त पर दायित्व स्थानांतरित करने के लिए पर्याप्त नहीं है। (पैरा - 28)

अभियोजन अभियुक्तों के विरुद्ध संदेह से परे मामला सिद्ध करने में असफल रहा है। अपील स्वीकार की जाती है। (पैरा - 30, 31)

न्याय दृष्टान्त

राज कुमार @ सुमन बनाम राज्य (एनसीटी दिल्ली), क्रिमिनल अपील संख्या 1471 सन् 2023; शरद बिर्धिचंद सरडा बनाम महाराष्ट्र राज्य, एआईआर 1984 एससी 1622; अंजन कुमार सरमा बनाम असम राज्य, (2017) 14 एससीसी 359; रवि बनाम कर्नाटक राज्य, (2018) 16 एससीसी 102; शैलेन्द्र राजदेव पसवन बनाम गुजरात राज्य, (2020) 14 एससीसी 750; महेश्वर टिग्गा बनाम झारखंड राज्य, (2020) 10 एससीसी 108; रीना हाजारिका बनाम असम राज्य, (2019) 3 एससीसी 289

अधिनियमों की सूची

भारतीय दंड संहिता, 1860 - धारा 302, 34; शस्त्र अधिनियम, 1959 - धारा 27; दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 313, 374(2); भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 - धारा 106

मुख्य शब्दों की सूची

परिस्थितिजन्य साक्ष्य; लास्ट सीन टुगेदर; धारा 313 दं.प्र.सं.; परिस्थितियों की श्रृंखला; संदेह का लाभ; बरी

प्रकरण से उत्पन्न

2009 का सत्र वाद संख्या 1091, 2009 का खोदावंदपुर थाना कांड संख्या 53, जिला बेगूसराय से उत्पन्न।

पक्षकारों की ओर से उपस्थिति

(2015 की आपराधिक अपील (ख.पी.) संख्या 521) में

अपीलार्थी/ओं के लिए : श्री अशोक कुमार

उत्तरदाता/ओं के लिए कुमार : श्री अजय मिश्रा स.लो.अ.

(2015 के आपराधिक आवेदन (ख.पी.) संख्या 418 में)

अपीलकर्ता/ओं के लिए : श्री जीतेन्द्र नारायण सिन्हा

उत्तरदाता/ओं के लिए : श्री जी.पी. जायस्वाल, स.लो.अ.

रिपोर्टर द्वारा हेडनोट बनाया गया: अमित कुमार मल्लिक, अधिवक्ता

माननीय पटना उच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में
2015 की आपराधिक अपील (ख.पी.) सं. 521

वर्ष-2009 का खोदाबंदपुर थाना कांड सं. 53, जिला-बेगुसराय से उद्भूत

==

ब्रह्मदेव साहनी, पिता - लालधारी साहनी, निवासी - गाँव- बारा, थाना - खोदाबंदपुर जिला-बेगुसराय

.... अपीलार्थी

बनाम

बिहार राज्य।

.... उत्तरदाता

==

के साथ
2015 की आपराधिक अपील (ख.पी.) सं. 418

वर्ष-2009 का खोदाबंदपुर थाना कांड सं. 53, जिला-बेगुसराय

==

परमानंद साह, पिता- स्व. श्री साह, निवासी - गाँव- बारा, थाना - खोदाबंदपुर जिला-बेगुसराय

.... अपीलार्थी

बनाम

बिहार राज्य

.... उत्तरदाता

==

उपस्थिति :

(2015 की आपराधिक अपील (ख.पी.) संख्या 521) में

अपीलार्थी/ओं के लिए : श्री अशोक कुमार

उत्तरदाता/ओं के लिए कुमार : श्री अजय मिश्रा स.लो.अ.

(2015 के आपराधिक आवेदन (ख.पी.) संख्या 418 में)

अपीलकर्ता/ओं के लिए : श्री जीतेन्द्र नारायण सिन्हा

उत्तरदाता/ओं के लिए : श्री जी.पी. जायस्वाल, स.लो.अ.

==

कोरम : माननीय न्यायमूर्ति श्री विपुल एम. पंचोली

और

माननीय न्यायमूर्ति श्री चंद्र शेखर झा

मौखिक निर्णय

(प्रतिः माननीय न्यायमूर्ति श्री विपुल एम. पंचोली)
तारीखः22-08-2023

ये दोनों अपीलें दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 374 (2) (इसके बाद "संहिता" के रूप में संदर्भित) के तहत दायर की गई हैं, जो अपर जिला और सत्र न्यायाधीश-7, बेगुसराय द्वारा , वर्ष 2009 के खुदाबंदपुर थाना कांड सं. 53 से उद्भूत, 2009 के सत्र वाद संख्या 1091 में दिनांक 17.03.2015 को पारित किये गए दोषसिद्धि और सजा के आदेश के सामान्य निर्णय के विरुद्ध दायर की गई हैं जिसके द्वारा संबंधित विचारण न्यायालय ने दोनों अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए दोषी ठहराया है।पुनः अपीलार्थी परमानंद साह को विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा शस्त्र अधिनियम की धारा 27 के तहत दंडनीय अपराध के लिए भी दोषी ठहराया गया है।

दोनों अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत दंडनीय अपराध के लिए 10,000/-रुपये के जुर्माने के साथ आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई है। पुनः अपीलार्थी परमानंद साह को शस्त्र अधिनियम की धारा 27 के तहत दंडनीय अपराध के लिए 10,000/- रुपये के जुर्माने के साथ पांच साल के लिए कठोर कारावास से गुजरने की सजा सुनाई गई है और जुर्माने का भुगतान न करने पर अपीलार्थी ब्रह्मदेव साहनी को छह महीने के लिए और अपीलार्थी परमानंद साह को एक साल के लिए कठोर कारावास से गुजरना होगा

2. अभियोजन पक्ष की कहानी, संक्षेप में, इस प्रकार हैः

गांव बारा, थाना खोदावंदपुर, जिला बेगुसराय के महेश साहू की पत्नी अनीता देवी, ने संबंधित पुलिस प्राधिकरण को सूचित किया कि उनके पति ने 12 कट्टों की जमीन पर *भिंडी*, मक्का, लौकी (*कद्दू*) आदि सहित कुछ फसलों की खेती की थी, जिसे उन्होंने ग्रामीण अश्विनी झा से पट्टे पर लिया था। यह भी कहा गया है कि इस भूमि के बगल में एक ब्रह्मदेव साहनी [2015 का आपराधिक अपील (ख.पी.) सं. 521 के अपीलार्थी] की भूमि स्थित है और उसने भी भूमि पर खेती की थी। वे रोज अपने खेत में खाना खाने के बाद सोने जाते थे। यह आरोप लगाया जाता है कि घटना की तारीख को रात के लगभग 09:00 बजे, आरोपी ब्रह्मदेव

साहनी प्रथम सूचिका के घर आया और उसके पति को उसके साथ जाने के लिए कहा ताकि वे ब्रह्मदेव साहनी के खेत में सो सकें। इसके बाद, प्रथम सूचिका का पति आरोपी ब्रह्मदेव साहनी के साथ उनके खेत में गया था। हालाँकि, प्रथम सूचिका ने देखा कि उसका पति चादर भूल गया था और इसलिए, वह अपनी बेटी के साथ ब्रह्मदेव साहनी के खेत की ओर बढ़ गई थी। उस समय, जब वह तेतराही रोड के पास पहुंची, तो उसने गोलीबारी की आवाज सुनी और उसके बाद उसने परमानंद साहू [2015 की आपराधिक अपील (ख.पी.) सं. 418 के आरोपी] को एक अन्य सह-आरोपी ब्रह्मदेव साहनी के साथ पिस्तौल से लैस देखा। एक अज्ञात व्यक्ति भी मौजूद था और ये सभी व्यक्ति उस स्थान से भाग गए। इसके बाद प्रथम सूचिका ने देखा कि उसका पति नीचे गिर गया था और उसके शरीर से खून बह रहा था। इसके बाद उसने अपने पति को मृत पाया। प्रथम सूचिका और उसकी बेटी पिंकी कुमारी दोनों अपने गाँव पहुँचे जहाँ गाँव के लोग इकट्ठा हुए और उसके बाद पुलिस को बुलाया गया और वर्तमान अपीलार्थी और अन्य खिलाफ उक्त प्राथमिकी दर्ज की गई। प्राथमिकी रात 10:45 बजे दर्ज की गई थी।

3. प्रथिमिकी दर्ज होने के बाद अनुसंधानकर्ता ने जाँच शुरू की। जाँच के दौरान उन्होंने गवाहों के बयान दर्ज किए। मृतक के शव को पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया गया। शव को पोस्टमॉर्टम के लिए भेजने से पहले *पंचनामा* भी तैयार किया गया था। अनुसंधान समाप्त होने के बाद, अनुसंधानकर्ता ने संबंधित न्यायिक दंडाधिकारी के न्यायालय के समक्ष अभियुक्त के विरुद्ध आरोप पत्र समर्पित किया। चूंकि मामला विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय था, इसलिए संबंधित न्यायिक दंडाधिकारी ने इसे सत्र न्यायालय को सौंप दिया, जहां इसे 2009 के सत्र वाद सं. 1091 के रूप में दर्ज किया गया।

4. मुकदमे के दौरान अभियोजन पक्ष ने पांच गवाहों से पूछताछ की थी और दस्तावेजी साक्ष्य भी पेश किए । आगे, अभियोजन पक्ष के साक्ष्य समाप्त होने के बाद, अपीलार्थी-अभियुक्त का बयान संहिता की धारा 313 के तहत दर्ज किया गया ।अभियोजन

पक्ष द्वारा प्रस्तुत दस्तावेजी के साथ-साथ मौखिक साक्ष्य पर विचार करने के बाद विचारण न्यायालय ने दोषसिद्धि का विवादित आदेश पारित किया जैसा कि यहाँ ऊपर देखा गया है। इसलिए इन दोनों अपीलार्थी-दोषियों ने दो अलग-अलग अपील दायर की हैं।

5.चूँकि अपीलार्थी ब्रह्मदेव साहनी (2015 की आपराधिक अपील (ख.पी.) सं. 521 की अपीलार्थी) की ओर से विद्वान अधिवक्ता अपने निवेदन के लिए उपलब्ध नहीं थे, हमने अधिवक्ता सुश्री सूर्य नीलांबरी से न्यायालय की सहायता करने का अनुरोध किया तथा उन्हें 2015 की आपराधिक अपील (ख.पी.) सं. 521 में *न्यायमित्र* के रूप में नियुक्त किया गया।

6. हमने अपीलार्थी ब्रह्मदेव साहनी की ओर से विद्वान *न्यायमित्र*, सुश्री सूर्य नीलांबरी, अपीलार्थी परमानंद साह की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री बख्शी एस.आर.पी. सिन्हा, तथा उनके सहायक अधिवक्ता श्री जितेंद्र नारायण सिन्हा, प्रतिवादी-राज्य के लिए विद्वान स.लो.अ. श्री सत्य नारायण प्रसाद के साथ-साथ सूचिका की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री विजय आनंद की दलीलें सुनी हैं।

7. अपीलार्थी परमानंद साह की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता के साथ-साथ विद्वान *न्यायमित्र* ने मुख्य रूप से तर्क दिया है कि हालांकि अभियोजन पक्ष ने तीन गवाहों का परिक्षण किया है, परन्तु उक्त गवाहों ने विचाराधीन घटना को नहीं देखा है, इसलिए वे घटना के चश्मदीद गवाह नहीं हैं। यह प्रस्तुत किया जाता है कि अभियोजन पक्ष का मामला परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित है और मुख्य रूप से अभियोजन पक्ष का मामला यह है कि आरोपी ब्रह्मदेव को अंत में मृतक के साथ देखा गया था जब आरोपी ब्रह्मदेव प्रथम सूचिका के घर आया था और प्रथम सूचिका के पति तथा आरोपी ब्रह्मदेव एक साथ उनके खेत में गए थे। यह प्रस्तुत किया जाता है कि हालांकि मृतक की पत्नी, प्रथम सूचिका अनीता देवी ने गवाही दिया था कि उसने दोनों अपीलार्थियों को एक अज्ञात व्यक्ति के साथ घटना स्थल से भागते देखा था और आरोपी परमानंद साहू अपने हाथ में पिस्तौल लिए हुए थे, लेकिन उक्त गवाह द्वारा सामने रखी गई कहानी पर विश्वास करना मुश्किल है क्योंकि यह

एक अंधेरी रात थी और इसलिए, उसके और अन्य दो गवाहों के लिए आरोपी की पहचान करना मुश्किल था। पक्षों के विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि प्राथमिकी में प्रथम सूचिका द्वारा दी गई जानकारी के साथ-साथ विचारण न्यायालय के समक्ष दी गई उसकी गवाही के बीच वृहद विरोधाभास हैं। पुनः यह प्रस्तुत किया जाता है कि अभियोजन पक्ष अभियुक्त के अपराध करने के उद्देश्य को साबित करने में विफल रहा है। यह तर्क दिया जाता है कि प्रथम सूचिका ने प्राथमिकी में विशेष रूप से कहा है कि मृतक और आरोपी परमानंद साहू के बीच भूमि विवाद था। हालाँकि, उक्त गवाह के प्रतिपरीक्षण के दौरान, उसने विशेष रूप से कंडिका - 3 में कहा है कि विचाराधीन भूमि का विभाजन 20 साल पहले हुआ था और पक्षों के बीच किसी भी न्यायालय में कोई विवाद लंबित नहीं था। अन्यथा भी, विद्वान वकील द्वारा प्रस्तुत किया जाता है कि मृतक और आरोपी ब्रह्मदेव साहनी के बीच कोई शत्रुता नहीं थी। विद्वान अधिवक्ता, उक्त तर्क के समर्थन में उक्त गवाह की प्रतिपरीक्षण के अनुच्छेद-13 का उल्लेख किया है। अंततः, अपीलार्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि दंड संहिता की धारा 313 के तहत बयान दर्ज करते समय अभियुक्तों के घटना स्थल से भागते हुए देखे जाने जैसी सामग्री प्रस्तुत नहीं की गई थी। विद्वान अधिवक्ता ने अभियुक्त के बयान का उल्लेख किया है जो संहिता की धारा 313 के तहत दर्ज किया गया था।

8. यह भी प्रस्तुत किया जाता है कि अभियोजन पक्ष यह साबित करने में विफल रहा है कि कैसे आरोपी ब्रह्मदेव ने आरोपी परमानंद को मृतक को मारने में मदद की और इस तरह वह मृतक को मारने के सामान्य इरादे को साझा कर रहा था। इसलिए विद्वान अधिवक्ता ने आग्रह किया कि जब अभियोजन पक्ष आवेदक-अभियुक्तों के विरुद्ध वाद को उचित संदेह से परे प्रमाणित करने में विफल रहा है, तो विचारण न्यायालय को उन्हें बरी कर देना चाहिए था।

9. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 11.05.2023 को ***राज कुमार उर्फ़ सुमन बनाम राज्य (दिल्ली का एन. सी. टी.)*** के मामले में, ***2018 के एस.एल.पी. (आपराधिक) संख्या 11256 से उद्भूत 2023 की आपराधिक अपील सं. 1471*** में दिए गए निर्णय पर भरोसा जताया है। विद्वान न्यायमित्र ने अनुच्छेद सं. 11 तथा 16 का उल्लेख किया है और उस पर विश्वस्नीयता जताई है। पुनः, विद्वान अधिवक्ता ने ***ए. आई. आर. 1984 एस. सी. 1622*** में प्रतिवेदित ***शरद बिरधीचंद सारदा बनाम महाराष्ट्र राज्य*** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भरोसा रखा है। विद्वान अधिवक्ता ने विशेष रूप से अनुच्छेद सं.150 से 160 का उल्लेख किया है और उस पर निर्भरता रखी है। इसलिए विद्वान अधिवक्ताओं ने अनुरोध किया कि विवादित आदेश को रद्द तथा अपास्त कर दिया जाए और इन दोनों अपीलों को स्वीकार कर लिया जाए।

10. दूसरी ओर, विद्वान स.लो.अ. ने इन दोनों अपीलों का विरोध किया। मुख्य रूप से यह तर्क दिया जाता है कि आरोपी ब्रह्मदेव को अंततः मृतक के साथ तब देखा गया जब वह घटना की तारीख को रात के लगभग 09:00 बजे मृतक के आवास पर आया था। इसके बाद, अभियोजन पक्ष के तीनों गवाहों ने इन दोनों अपीलार्थियों को एक अज्ञात व्यक्ति के साथ घटना स्थल से भागते हुए देखा है। उन्होंने अभियुक्तों को टॉर्च लाइट में देखा है और घटना स्थल पर मौजूद अपीलार्थियों के कृत को देखते हुए, अभियोजन पक्ष ने उस स्थान पर उनकी उपस्थिति साबित की है और इसलिए, विचारण न्यायालय ने दोषि-अभियुक्तों के विरुद्ध दोषसिद्धि का आदेश पारित करते समय कोई त्रुटि नहीं की है। विद्वान स.लो.अ. ने अपने तर्क के समर्थन में साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 में निहित प्रासंगिक प्रावधानों का भी उल्लेख किया है। विद्वान स.लो.अ. ने अ. सा.-4, चिकित्सक, जिन्होंने मृतक का पोस्टमॉर्टम किया था द्वारा दिए गए बयान का उल्लेख किया है तथा अ.सा.-5, अनुसंधानकर्ता द्वारा दिए गए बयान को भी संदर्भित किया। यह प्रस्तुत किया जाता है कि जब अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थियों के विरुद्ध मामले को उचित संदेह से परे साबित कर दिया है, तो अपीलार्थियों के

खिलाफ दोषसिद्धि का आदेश पारित करते समय विद्वत विचारण न्यायालय द्वारा कोई त्रुटि नहीं की गई है। इसलिए उन्होंने दोनों याचिकाओं को खारिज करने का आग्रह किया।

11. हमने पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ताओं और *न्यायमित्र* द्वारा दिए गए तर्क पर विचार किया है। हमने अभियोजन पक्ष द्वारा विचारण न्यायालय के समक्ष पेश किए गए सभी साक्ष्यों का भी अवलोकन किया। अभिलेख से यह पता चलता है कि अ.सा.-3, अनीता देवी ने प्राथमिकी दर्ज कराई है जिसमें उन्होंने इन दोनों अपीलार्थियों और एक अज्ञात व्यक्ति का नाम दिया था। न्यायालय के समक्ष अपने बयान के दौरान, अ.सा.-3 ने अपने मुख्य परीक्षण में कहा है कि रात के लगभग 09:00 बजे जब वह अपने पति, अपनी बेटी पिंकी कुमारी और ससुर डोरिक साओ के साथ अपने आवास पर थी, तो आरोपी ब्रह्मदेव आवास पर आया और सूचिका के पति को अपने साथ जाने के लिए कहा। उस समय, उक्त गवाह ने ब्रह्मदेव से कहा कि उसका पति उसके साथ नहीं जाएगा क्योंकि अपीलकर्ता परमानंद साह उसके पति को मार देगा। परन्तु, ब्रह्मदेव साहनी ने जोर देकर कहा कि सुचिका के पति को उनके साथ जाना चाहिए। इसके बाद, वे दोनों सूचिका के घर से निकले और ब्रह्मदेव साहनी के खेत की ओर चले गए। इसके बाद सूचिका ने देखा कि उसका पति चादर लेना भूल गया है और इसलिए वह अपनी बेटी के साथ खेत की ओर चली गई और जब वह *बरा तेतराही* रोड के पास पहुंची तो उसने गोलीबारी की आवाज सुनी और उसके बाद उसने देखा कि आरोपी परमानंद साह और ब्रह्मदेव साहनी उक्त स्थान से भाग रहे थे। इसके बाद वह तुरंत "*बड़ा तेतराही सड़क*" की ओर गईं और उसने देखा की उसके पति के शरीर से खून बह रहा था। उसने यह भी कहा है कि उसने परमानंद साह के हाथ में पिस्तौल देखी थी। उसने आगे कहा कि परमानंद साह का उसके पति के साथ भूमि के संबंध में विवाद था, जिसके परिणामस्वरूप उसके पति की उक्त आरोपी द्वारा अन्य सह-अभियुक्तों की मदद से हत्या कर दी गई । अपनी प्रतिपरीक्षण के दौरान, उक्त गवाह ने विशेष रूप से स्वीकार किया है कि आरोपी परमानंद के पिता और उसके ससुर सगे भाई हैं और 20 साल पहले भूमि का

विभाजन हुआ था। उसने आगे स्वीकार किया है कि आरोपी ब्रह्मदेव साहनी की प्रथम सूचिका के परिवार के साथ कोई दुश्मनी नहीं थी और मृतक और आरोपी परमानंद साह के बीच भूमि के संबंध में कोई वाद लंबित नहीं है। उक्त गवाह ने अपनी प्रतिपरीक्षण में आगे कहा है कि अनुसंधानकर्ता ने मृतक का शव टॉर्च की रोशनी के साथ-साथ चंद्रमा की रोशनी में भी देखा था।

12. अ.सा.-1, डोरिक साह प्रथम सुचिका के ससुर और मृतक के पिता हैं। उक्त गवाह ने अ.सा.-3, प्रथम सुचिका द्वारा रखे गए मामले का भी समर्थन किया है। इसी तरह अ.सा.-2, पिंकी कुमारी, जिनकी आयु लगभग 14 वर्ष है, ने भी प्रथम सुचिका, अ.सा.-3 द्वारा दिए गए वक्तव्य का समर्थन किया है।

13. अ.सा.-4, डॉ. अरुण कुमार वह गवाह हैं जिन्होंने मृतक का पोस्टमॉर्टम किया था। उक्त गवाह ने मृतक के शरीर पर निम्नलिखित बाहरी चोटें पाई और उसके बाद मौत के कारण के संबंध में अपनी राय दी।

"(i) घाव के किनारे का आकार 1 1/2 "x 1/2" अंदर की और बाएं कमर में स्थित 1 1/2 "बाएं से क्यूबिक सिम्फिसिस किनारे के चारों ओर घाव के के साथ गोली लगने के कारण बने घाव।

खोपड़ी विच्छेद पर मस्तिष्क का पदार्थ पीला पड़ा हुआ ।

दोनों फेफड़े पिले पड़े हुए।

हृदय-दोनों कक्ष खाली हैं।

पेट - यकृत- फीका पड़ा हुआ ।

प्लीहा - यकृत- फीका पड़ा हुआ ।

गुर्दा - फीका पड़ा हुआ ।

अमाशय गुहा - रक्त और रक्त के थक्कों से भरी छोटी और बड़ी आंत में छिद्रित और असामान्य प्रवेश। मिसेंट्री-पेरिटोनियल गुहा के अंदर मौजूद घाव वाले खाद्य भाग की सामग्री।

मूत्र में रक्त स्राव । प्रोस्ट्रेट घाव। एक गोली त्वचा की मांसपेशियों के नीचे बाईं ओर कशेरुका स्तंभ के कशेरुका 2,3 और 4 तक पाई गई। मृत्यु के बाद से छह से 24 घंटे के भीतर का समय अंतराल।

मृत्यु का कारण - मेरी राय में मृत्यु गोली के कारण उपरोक्त चोटों के परिणामस्वरूप न्यूरोजेनिक और रक्तस्रावी सदमे के कारण हुई है।"

चिकित्सक द्वारा दिए गए उपरोक्त बयान से यह कहा जा सकता है कि अभियोजन पक्ष ने साबित कर दिया है कि मृतक की मृत्यु अप्राकृतिक मृत्यु और उसे लगी गोली की चोट के कारण हुई थी।

14. अ.सा.-5, सुरेंद्र कुमार मौआर अनुसंधानकर्ता थे जिन्होंने प्राथमिकी दर्ज होने के बाद अनसंधान किया था। प्रथम सूचिका, अनीता देवी द्वारा दी गई जानकारी के आधार पर उनके द्वारा प्राथमिकी दर्ज की गई थी। मुख्य परिक्षण के दौरान, उक्त गवाह ने कहा है कि अनुसंधान के दौरान, उसने गाँव के लोगों का बयान दर्ज किया था, जिसमें मोहम्मद आरिफ, रघुनी साहनी, कुशेश्वर महतो, हीरालाल ठाकुर, जगदीश महतो और सूरज महतो भी शामिल था। हालाँकि, इस स्तर पर, यह ध्यान रखना उचित है कि अभियोजन पक्ष ने उपरोक्त सभी स्वतंत्र गवाहों का परिक्षण नहीं किया है, जिनका बयान अनुसंधानकर्ता द्वारा दर्ज किया गया था। प्रतिपरीक्षण के दौरान, उक्त गवाह ने इस तथ्य को भी स्वीकार किया है कि गवाह डोरिक साओ (अ.सा.-1, मृतक के पिता) द्वारा बयान देते समय, जो संहिता की धारा 161 के तहत दर्ज किया गया था, उसने यह नहीं कहा है कि जब वह घटना स्थल पर गया था तो उसके हाथ में टॉर्च था। उक्त गवाह ने आगे कहा कि पेट्रोमैक्स और टोर्च की रौशनी में, उसने *पंचनामा* तैयार किया था।

15. हमने मृतक की मृत्यु समीक्षा प्रतिवेदन तथा अन्त्य परीक्षण प्रतिवेदन का भी सत्यापन किया है। हमने संहिता की धारा 313 के तहत दर्ज अपीलकर्ता-अभियुक्त के आगे के बयान पर भी विचार किया है। अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत उपरोक्त साक्ष्य से यह पता

चलता है कि विचाराधीन घटना का कोई चश्मदीद गवाह नहीं है और अभियोजन पक्ष का मामला अधिकतम परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित है और मुकदमे के दौरान अभियोजन पक्ष द्वारा बताई गई परिस्थितियों में से एक यह थी कि मृतक को अंत में अपीलकर्ता ब्रह्मदेव साहनी के साथ देखा गया था जब आरोपी ब्रह्मदेव साहनी प्रथम सूचिका के घर आया और मृतक को बुलाया और वे दोनों अपने खेत में चले गए। अभियोजन पक्ष द्वारा अभियोजन पक्ष के गवाह के साक्ष्य के आधार पर इंगित की गई एक अन्य परिस्थिति यह है कि मृतक की पत्नी, प्रथम सूचिका - अनीता देवी, अ.सा.- 3 ने इन दोनों अपीलार्थी-अभियुक्तों को घटना स्थल से भागते देखा था और उसके तुरंत बाद प्रथम सूचिका के पति का शव घटना स्थल पर मिला था और इसलिए, विद्वान स.लो.अ. द्वारा यह तर्क दिया जाता है कि 22-08-2023 अपीलार्थी-अभियुक्तों के कृत और जबकि वे घटना स्थल पर मौजूद पाए गए, तो इस प्रकार अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त के विरुद्ध मामले को उचित संदेह से परे साबित कर दिया है। इस स्तर पर, यह ध्यान देना यथोचित है कि वह एक अंधेरी रात थी और इसलिए, प्रथम सूचिका के लिए आरोपी की पहचान कर पाना मुश्किल था। अभियोजन पक्ष के गवाहों ने हालांकि अपने बयान में कहा कि उन्होंने घटना को टॉर्च की रोशनी में देखा है जिसे अ.सा.-1, डोरिक साओ अपने हाथ में ले जा रहे थे। हालांकि, अनुसंधानकर्ता, अर्थात अ.सा.- 5 द्वारा दिए गए बयान से यह पता चलता है कि अ.सा.-1, डोरिक साओ ने संहिता की धारा 161 के तहत पुलिस के समक्ष बयान देते हुए उक्त पहलू के बारे में नहीं बताया है।

16. हमने अ.सा.-1 से अ.सा.-3 के गवाही का अध्ययन किया है, जो मृतक के करीबी रिश्तेदार हैं और हमारा मानना है कि उनके बयान में बड़े विरोधाभास, चूक और सुधार हैं और इसलिए अभियोजन पक्ष द्वारा सामने रखी गई कहानी संदिग्ध है। पुनः, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि विचाराधीन घटना का कोई चश्मदीद गवाह नहीं है और जैसा कि विद्वान स.लो.अ. द्वारा तर्क दिया गया है, अभियोजन पक्ष अंतिम बार एक साथ देखे जाने के सिद्धांत पर निर्भर करता है। इस स्तर पर, हम माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा ***शरद बिरधीचंद***

सारदा (उपरोक्त) मामले में दिए गए निर्णय का उल्लेख करना चाहेंगे, जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने अनुछेद 150 से 160 में निम्नलिखित टिप्पणी की हैः

"150. यह पूर्णतः स्थापित किया गया है कि अभियोजन पक्ष को सफलता या विफलता स्वयं के क्षमता पर प्राप्त करना चाहिए और बचाव पक्ष की कमजोरी से कोई सामर्थ्य प्राप्त नहीं कर सकता है। यह एक लघु कानून है और किसी भी निर्णय ने इसके विपरीत दृष्टिकोण नहीं लिया है। कुछ मामलों में जो हुआ है वह केवल यह हैः जहां एक श्रृंखला में विभिन्न संबंध अपने आप में पूर्ण हैं, तो एक झूठी याचिका या एक झूठे बचाव को केवल अदालत को आश्वासन देने के लिए सहायता के लिए बुलाया जा सकता है। दूसरे शब्दों में, अतिरिक्त कड़ी का उपयोग करने से पहले यह साबित किया जाना चाहिए कि श्रृंखला में सभी कड़ी पूर्ण हैं और किसी भी दुर्बलता से पीड़ित नहीं हैं। यह कानून नहीं है कि जहां अभियोजन पक्ष के मामले में कोई कमजोरी या कमी है, उसे एक ऐसे झूठे बचाव या एक याचिका द्वारा ठीक या प्रदान किया जा सकता है जिसे न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया जाता है।

151. उच्च न्यायालय द्वारा जिन मामलों पर भरोसा किया गया है, उन पर चर्चा करने से पहले हम आपराधिक मामले में आवश्यक प्रकृति, चरित्र और आवश्यक सबूत पर कुछ निर्णयों का हवाला देना चाहेंगे जो केवल परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर निर्भर करते हैं।इस न्यायालय का सबसे मौलिक और बुनियादी निर्णय हनुमंत बनाम मध्य प्रदेश राज्य 1952 एस. सी. आर. 1091 हैः(ए. आई. आर 1952 एस. सी. 343)। इस मामले का समान रूप से पालन किया गया है और इस न्यायालय द्वारा बड़ी संख्या में बाद के निर्णयों में लागू किया गया है, उदाहरण के लिए, तुफैल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (1969) 3 एस. सी. सी. 198 , और रामगोपाल बनाम महाराष्ट्र राज्य, ए. आई. आर. 1972 एस. सी. 656 के मामले। जे. महाजन ने हनुमंत के मामले में (आकाशवाणी के पृष्ठ 345-46 पर) (ऊपर) जो कहा है, उसे उल्लिखित करना उपयोगी हो सकता हैः

"यह अच्छी तरह से याद रखना चाहिए कि ऐसे मामलों में जहां साक्ष्य परिस्थितिजन्य प्रकृति का है, जिन परिस्थितियों से अपराध का निष्कर्ष निकाला जाना है, पहली बार में पूरी तरह से स्थापित किया जाना चाहिए, और इस तरह से स्थापित सभी तथ्य केवल अभियुक्त के अपराध की परिकल्पना के अनुरूप होने चाहिए। पुनः , परिस्थितियाँ निर्णायक प्रकृति और प्रवृति की होनी चाहिए और वे ऐसी होनी चाहिए कि हर परिकल्पना को परे कर दिया जाए,

अतिरिक्त उसके जिसे साबित करना प्रस्तावित है। दूसरे शब्दों में, पूर्ण साक्ष्य की एक श्रृंखला होनी चाहिए जो अभियुक्त की निर्दोषता के अनुरूप निष्कर्ष के लिए कोई उचित आधार नहीं छोड़ती है।

और यह ऐसा होना चाहिए जिससे यह पता चले कि सभी मानवीय संभावनाओं के भीतर यह कार्य अभियुक्त द्वारा किया गया होगा।"

152. इस निर्णय के गहन विश्लेषण से पता चलेगा कि किसी अभियुक्त के खिलाफ मामले को पूरी तरह से स्थापित होने से पहले निम्नलिखित शर्तों को पूरा किया जाना चाहिएः

(1) जिन परिस्थितियों से अपराध का निष्कर्ष निकाला जाना है, उन्हें पूरी तरह से स्थापित किया जाना चाहिए।

यहाँ यह ध्यान दिया जा सकता है कि इस न्यायालय ने संकेत दिया कि संबंधित परिस्थितियाँ 'आवश्यक रूप से स्थापित होनी चाहिए या स्थापित होनी चाहिए' और नहीं कि "स्थापित की जा सकती हैं "। जैसा कि इस न्यायालय ने शिवाजी साहबराव बोबडे बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1973) 2 एस. सी. सी. 793 (ए. आई. आर. 1973 एस. सी. 2622) में अभिनिर्धारित किया था, 'साबित किया जा सकता है' और ' अवश्य साबित किया जाना चाहिए या साबित किया जाना चाहिए' के बीच न केवल एक व्याकरणिक बल्कि एक विधिक अंतर है, जहाँ टिप्पणी किए गए थेः

"निश्चित रूप से, यह एक प्राथमिक सिद्धांत है कि अभियुक्त को अदालत द्वारा दोषी ठहराए जाने से पहले अवश्य दोषी होना चाहिए और न कि केवल दोषी हो सकता है और 'हो सकता है' और 'होना चाहिए' के बीच की मानसिक दूरी लंबी है और कुछ निष्कर्षों से अस्पष्ट अनुमानों को विभाजित करती है।"

(2) इस प्रकार स्थापित तथ्य केवल अभियुक्त के अपराध की परिकल्पना के अनुरूप होने चाहिए, अर्थात वे किसी अन्य परिकल्पना पर समझाने योग्य नहीं होने चाहिए सिवाय इसके कि अभियुक्त दोषी है।

(3) परिस्थितियाँ निर्णायक प्रकृति और प्रवृति की होनी चाहिए,

(4) उन्हें साबित की जाने वाली परिकल्पना को छोड़कर हर संभावित परिकल्पना को बाहर करना चाहिए, और

(5) साक्ष्य की एक ऐसी श्रृंखला होनी चाहिए जो इतनी पूर्ण हो कि अभियुक्त की बेगुनाही के अनुरूप निष्कर्ष के लिए कोई उचित आधार न छोड़े और यह दिखाना चाहिए कि सभी मानवीय संभावनाओं में यह कार्य अभियुक्त द्वारा किया गया होगा।

153. ये पाँच सुनहरे सिद्धांत, यदि हम ऐसा कहें, तो परिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर मामले के प्रमाण का पंचशील बनाते हैं।

154. यह ध्यान रखना रुचिकर हो सकता है कि जहां तक परिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर आपराधिक मामले में सबूत के तरीके का संबंध है, एक काय अपराध के अभाव में, उसी के सबूत के रूप में विधि का वक्त्वय , ग्रेसन, जे. (और 3 और न्यायाधीशों द्वारा सहमति व्यक्त की गई) द्वारा द किंग बनाम हॉरी, (1952) एन.जेड.एल.आर. 111 में इस प्रकार रखा गया था:

"इससे पहले कि उसे दोषी ठहराया जा सके, मृत्यु के तथ्य को ऐसी परिस्थितियों से साबित किया जाना चाहिए जो अपराध को नैतिक रूप से सुनिश्चित करती हैं और उचित संदेह के लिए कोई आधार नहीं छोड़ती हैं: परिस्थितिजन्य साक्ष्य इतना ठोस और सम्मोहक होना चाहिए कि एक न्यायपीठ को यह समझाया जा सके कि हत्या के अलावा उन तथ्यों द्वारा कोई भी अन्य तर्कसंगत परिकल्पना नहीं की जा सकती है।

155. लॉर्ड गोडार्ड ने 'नैतिक रूप से निश्चित' अभिव्यक्ति को 'ऐसी परिस्थितियों से संशोधित किया जो अपराध को निश्चित बनाती हैं'।

156. यह आपराधिक न्यायशास्त्र के मूल सिद्धांत को इंगित करता है कि एक मामले को केवल तभी साबित किया जा सकता है जब निश्चित और स्पष्ट साक्ष्य हो और किसी भी व्यक्ति को शुद्ध नैतिक दोषसिद्धि पर दोषी नहीं ठहराया जा सकता है। हॉरी के मामले (उपरोक्त) को इस न्यायालय द्वारा अनंत चिंतामन लागू बनाम बॉम्बे राज्य, (1960) 2 एस. सी. आर. 460 (ए. आई. आर. 1960 एस. सी. 500) में अनुमोदित किया गया था। लागू के मामले के साथ-साथ हनुमंत के मामले (उपरोक्त) में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों का बिना किसी एक अपवाद के इस न्यायालय के बाद के सभी फैसलों में समान रूप से और लगातार पालन किया गया है। कुछ मामलों को उद्धृत करने के लिए-तुफैल मामला (1969) 3 एस. सी. सी. 198 (उपरोक्त), रामगोपाल का मामला (ए. आई. आर. 1972 एस. सी. 656) (उपरोक्त), चंद्रकांत न्यालचंद सेठ बनाम बॉम्बे राज्य (1957 की आपराधिक अपील संख्या 120 , 19-02-1958 को निष्पादित), धरमबीर सिंह बनाम पंजाब राज्य (1958 की आपराधिक अपील संख्या

98 , 04-11 -1958 को निष्पादित)। ऐसे कई अन्य मामले हैं जहां हालांकि हनुमंत के मामले पर स्पष्ट रूप से ध्यान नहीं दिया गया है, लेकिन उन्हीं सिद्धांतों को स्पष्ट और दोहराया गया है, जैसा कि नसीम अहमद बनाम दिल्ली प्रशासन, (1974) 2 एससीआर 694 (696):(ए. आई. आर. 1974 एस. सी.691 पी. 693), मोहन लाल पंगासा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, ए. आई. आर. 1974 एस. सी. 1144 (1146), शंकरलाल ग्यारासीलाल दीक्षित बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1981) 2 एस. सी. आर. 384 (390):(ए. आई. आर. 1981 एस. सी. 765 पी. 767) और एम. जी. अग्रवाल बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1963) 2 एससीआर 405 (419):(ए. आई. आर. 1963 एस. सी.. 200 पी. 206) पाँच-न्यायाधीशों की पीठ का निर्णय।

157. देवनंदन मिश्रा बनाम बिहार राज्य, (1955) 2 एस. सी. आर. 570 (582) : (ए. आई. आर. 1955 एस. सी. 801, पी. 806) में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए अतिरिक्त सॉलिसिटर-जनरल द्वारा प्रस्तुत एक बहुत ही जोरदार तर्क पर ध्यान देना यहां आवश्यक हो सकता है , उनके इस तर्क के पूरक के रूप में कि यदि बचाव पक्ष का मामला गलत है तो यह एक अतिरिक्त कड़ी का गठन करेगा ताकि अभियोजन पक्ष के मामले को मजबूत किया जा सके। विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल के प्रति उचित सम्मान के साथ हम उपरोक्त मामले के बारे में उनके द्वारा दी गई व्याख्या से सहमत होने में असमर्थ हैं, जिसका प्रासंगिक हिस्सा इस प्रकार निकाला जा सकता हैः

"लेकिन इस तरह के मामले में जहां ऊपर बताए गए विभिन्न कड़ियाँ संतोषजनक रूप से बनाए गए हैं और परिस्थितियां अपीलार्थी को समय और स्थिति के संबंध में उचित निश्चितता और मृतक की निकटता के साथ संभावित हमलावर के रूप में इंगित करती हैं। स्पष्टीकरण की अनुपस्थिति या गलत स्पष्टीकरण अपने आप में एक अतिरिक्त कड़ी होगी जो श्रृंखला को पूरा करती है।"

158. यह देखा जाएगा कि इस न्यायालय ने स्पष्टीकरण के अभाव या गलत स्पष्टीकरण को ध्यान में रखते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि यह श्रृंखला को पूरा करने के लिए एक अतिरिक्त कड़ी होगी, लेकिन इन टिप्पणियों को इस न्यायालय ने पहले जो कहा था, उसके आलोक में पढ़ा जाना चाहिए।, इससे पहले कि एक गलत स्पष्टीकरण को अतिरिक्त कड़ी के रूप में इस्तेमाल किया जा सके, निम्नलिखित आवश्यक शर्तों को पूरा किया जाना चाहिएः

(1) अभियोजन पक्ष के नेतृत्व में साक्ष्य की श्रृंखला में विभिन्न कड़ियाँ संतोषजनक रूप से साबित हुए हैं,

(2) उक्त परिस्थिति उचित निश्चितता के साथ अभियुक्त के अपराध की ओर इशारा करती है, और

(3) परिस्थिति , समय और स्थिति के निकट है

159. यदि इन शर्तों को पूरा किया जाता है, तो केवल तब न्यायालय , न्यायालय को आश्वासन देने के लिए एक अतिरिक्त कड़ी के रूप में गलत स्पष्टीकरण या झूठे बचाव का उपयोग कर सकती है, अन्यथा नहीं। वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर, ऐसा मामला प्रतीत नहीं होता है। शंकरलाल के मामले (ए. आई. आर. 1981 एस. सी. 765) (उपरोक्त) में इस पहलू की जांच की गई थी, जहाँ इस न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी कीः

"इसके अलावा, बचाव पक्ष का झूठ उन तथ्यों के प्रमाण का स्थान नहीं ले सकता है जिन्हें अभियोजन पक्ष को सफल होने के लिए स्थापित करना पड़ता है। एक झूठी याचिका को एक अतिरिक्त परिस्थिति के रूप में माना जा सकता है, अगर अन्य परिस्थितियाँ आरोपी के अपराध की ओर इशारा करती हैं।"

160. इसलिए यह न्यायालय हनुमंत के मामले (ए. आई. आर. 1952 एस. सी. 343) (ऊपर) में निर्धारित पाँच शर्तों से किसी भी तरह से अलग नहीं हुआ है। दुर्भाग्य से, हालांकि, ऐसा लगता है कि उच्च न्यायालय ने भी इस निर्णय का गलत अर्थ निकाला है और अपीलार्थी द्वारा रखे गए तथाकथित झूठे बचाव का उपयोग श्रृंखला से जुड़ी अतिरिक्त परिस्थितियों में से एक के रूप में किया है। परिस्थितियों की एक अधूरी श्रृंखला और एक ऐसी परिस्थिति जिसे श्रृंखला पूरी होने के बाद, केवल न्यायालय के निष्कर्ष को मजबूत करने के लिए इसमें जोड़ा जाता है, के बीच एक महत्वपूर्ण अंतर है। जब अभियोजन पक्ष हनुमंत के मामले में निर्धारित किसी भी आवश्यक सिद्धांत को साबित करने में असमर्थ होता है, तो उच्च न्यायालय झूठे बचाव या झूठी याचिका की सहायता या सहारा लेकर ,कमजोरी या कमी की आपूर्ति नहीं कर सकता है। इसलिए हम अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल के तर्क को स्वीकार करने में असमर्थ हैं।"

17. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए उपरोक्त निर्णय से यह कहा जा सकता है कि परिस्थितिजन्य साक्ष्य के मामले में, अपीलकर्ता-अभियुक्त के खिलाफ परिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर मामले को पूरी तरह से स्थापित कहा जा सकने के पहले कुछ शर्तों को अवश्य पूरा किया जाना चाहिए। सबूतों की श्रृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि आरोपी की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष के लिए कोई उचित आधार न छोड़े और

यह दिखाना चाहिए कि सभी मानवीय संभावनाओं में यह कार्य आरोपी द्वारा किया गया होगा और किसी अन्य के द्वारा नहीं । अभियोजन पक्ष के नेतृत्व में साक्ष्य की श्रृंखला में विभिन्न कड़ियों को संतोषजनक रूप से साबित करना होगा।

18. इस स्तर पर, हम माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा, **(2017) 14 एस सी सी** में प्रतिवेदित**, अंजन कुमार शर्मा बनाम असम राज्य**, में दिए गए निर्णय का भी उल्लेख और उस पर भरोसा करना चाहेंगे, जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 14,17 और 23 में निम्नलिखित टिप्पणी की हैः

"14. मान लीजिए, यह परिस्थितिजन्य साक्ष्य का मामला है। इस न्यायालय द्वारा निर्धारित परिस्थितिजन्य साक्ष्य के मामलों के निर्णय में ध्यान में रखे जाने वाले कारक हैंः

(1) जिन परिस्थितियों से अपराध का निष्कर्ष निकाला जाना है, उन्हें पूरी तरह से स्थापित किया जाना चाहिए। संबंधित परिस्थितियाँ , स्थापित "अवश्य होनी चाहिए" या "होनी चाहिए" और नहीं की "स्थापित की जा सकती हैं"।

(2) इस प्रकार स्थापित तथ्य केवल अभियुक्त के अपराध की परिकल्पना के अनुरूप होने चाहिए, अर्थात वे किसी अन्य परिकल्पना पर समझाने योग्य नहीं होने चाहिए सिवाय इसके कि अभियुक्त दोषी है।

(3) परिस्थितियाँ निर्णायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिए।

(4) उन्हें साबित की जाने वाली परिकल्पना को छोड़कर हर संभावित परिकल्पना को बाहर करना चाहिए तथा

(5) साक्ष्य की एक ऐसी श्रृंखला होनी चाहिए जो इतनी पूर्ण हो कि अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष के लिए कोई उचित आधार न छोड़े और यह दिखाना चाहिए कि सभी मानवीय संभावनाओं में यह कार्य अभियुक्त द्वारा किया गया होगा। (शरद बर्धीचंद सारदा बनाम महाराष्ट्र राज्य, एस. सी. सी. , पृष्ठ . 185, अनुच्छेद 153; एम. जी. अग्रवाल बनाम महाराष्ट्र राज्य, ए. आई. आर. एस. सी. अनुच्छेद 18 देखें)

XXX XXX XXX

17. यह स्थापित विधि है कि अदालत द्वारा निकाले गए निष्कर्ष स्थापित तथ्यों के आधार पर होने चाहिए न कि अनुमानों पर। (देखें - सुजीत विश्वास बनाम असम राज्य

[सुजीत विश्वास बनाम असम राज्य, (2013) 12 एस. सी. सी. 406:(2014) 1 एससीसी (सीआरआई) 677], एससीसी कंडिका 13-18I) उच्च न्यायालय द्वारा जो निष्कर्ष निकाला गया था कि मृत्यु 28 12-1992 को 48 घंटे के समय के भीतर हुई थी जैसा कि पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट में उल्लेख किया गया है, वह सही नहीं है।पोस्टमॉर्टम की जाँच 30-12-1992 को दोपहर 12.00 बजे पर की गई थी और अ.सा. - 11 द्वारा यह राय दी गई थी कि मृत्यु पोस्टमॉर्टम की जाँच के समय से 24 से 48 घंटे पहले हुई थी। भले ही समय को अधिकतम 48 घंटे तक बढ़ाया गया हो, मृत्यु 12.00 दोपहर के बाद 28-12-1992 को हुई थी। मृतक 27 -12-1992 को रात 9 बजे तक आरोपी के साथ था। उच्च न्यायालय द्वारा निकाला गया यह निष्कर्ष कि अभियुक्त ने 28-12-1992 को रात के समय मृतक की हत्या कर दी थी और शव को रेलवे पटरी पर फेंक दिया था, किसी भी सिद्ध तथ्यों के आधार पर नहीं है। निचली अदालत का यह मानना सही है कि यह दिखाने के लिए अभिलेख पर कोई साक्ष्य नहीं है कि मृतक 28-12-1992 को दोपहर 12.00 बजे के बाद आरोपी के साथ था।

XXX XXX XXX

23. उपरोक्त से यह स्पष्ट है कि ऐसे मामले में जहां अन्य कड़ियाँ संतोषजनक रूप से बनाए गए हैं और परिस्थितियां अभियुक्त के अपराध की ओर इशारा करती हैं, पिछली बार एक साथ देखे जाने की परिस्थिति और स्पष्टीकरण का अभाव एक अतिरिक्त कड़ी प्रदान करेगा जो श्रृंखला को पूरा करता है। अन्य परिस्थितियों के साक्ष्य के अभाव में, अंतिम बार एक साथ देखी गई एकमात्र परिस्थिति और संतोषजनक स्पष्टीकरण के अभाव को दोषसिद्धि का आधार नहीं बनाया जा सकता है। श्री वेंकटरमानी द्वारा उद्धृत इस मुद्दे पर अन्य निर्णय एक अलग दृष्टिकोण नहीं लेते हैं और इसलिए, उन्हें स्वीकार करने की आवश्यकता नहीं है। उन्होंने अपनी इस दलील के समर्थन में गोवा राज्य बनाम संजय ठाकुरन मामले में इस न्यायालय के फैसले पर भी भरोसा किया कि अंतिम बार एक साथ देखे जाने की परिस्थिति उस मामले में एक प्रासंगिक परिस्थिति होगी जहां किसी अन्य व्यक्ति के, घटना स्थल पर या बीच की अवधि में अपराध करने से पहले मृतक से मिलने या संपर्क करने की, कोई संभावना नहीं थी। उपरोक्त निर्णय में यह निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया था (एस. सी. सी. पृष्ठ 776, कंडिका 34)

"34. इस न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांत से, अभियुक्त को आरोपित अपराध का दोषी ठहराने के लिए आम तौर पर अंतिम बार एक साथ देखे जाने की परिस्थिति को ध्यान

में रखा जाएगा, जब अभियोजन पक्ष द्वारा यह स्थापित किया जाएगा कि अभियुक्त और मृतक के एक साथ जीवित पाए जाने और मृतक के मृत पाए जाने के बीच का समय इतना कम है कि मृतक के साथ किसी अन्य व्यक्ति के होने की संभावना को पूरी तरह से खारिज किया जा सकता है।मृतक की संगति में देखे गए अभियुक्त व्यक्तियों और अपराध का पता लगने के बीच का समय अंतराल साक्ष्य की सराहना करने और अभियुक्त के खिलाफ एक परिस्थिति के रूप में उस पर भरोसा करने के लिए एक भौतिक विचार होगा। लेकिन, सभी मामलों में, यह नहीं कहा जा सकता है कि आखिरी बार एक साथ देखे गए साक्ष्य को केवल इसलिए खारिज किया जाना चाहिए क्योंकि आरोपी व्यक्तियों और मृतक को आखिरी बार एक साथ देखे जाने तथा अपराध का पता लगने के बीच का समय अंतराल विचारणीय रूप से काफी लम्बा हो । इस संबंध में समय अंतराल की अवधि के लिए कोई निश्चित या स्पष्ट सिद्धांत नहीं हो सकता है और यह अभियोजन पक्ष के साक्ष्य पर निर्भर करेगा की मध्यवर्ती अवधि में किसी अन्य व्यक्ति के मृतक से मिलने की संभावना को दूर किया जा सके, अर्थात, यदि अभियोजन पक्ष इस तरह के साक्ष्यको प्रस्तुत करने में सक्षम है कि यदि अभियुक्त ,अपराध का लेखक होने के नाते , के अलावा किसी अन्य व्यक्ति के होने की संभावना असंभव हो जाता है, तो पिछली बार एक साथ देखी गई परिस्थिति का साक्ष्य, हालांकि समय की लंबी अवधि है, ऐसे अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ अपराध साबित करने के लिए परिस्थितियों की श्रृंखला में परिस्थितियों में से एक माना जा सकता है। इसलिए, यदि अभियोजन पक्ष यह साबित करता है कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आलोक में, घटना के स्थान पर या अपराध होने से पहले किसी अन्य व्यक्ति के मृतक से मिलने या संपर्क करने की कोई संभावना नहीं थी, तो बीच की अवधि में, अंतिम बार एक साथ देखे गए साक्ष्य प्रासंगिक साक्ष्य होंगे। उदाहरण के लिए, यदि यह प्रदर्शित किया जा सकता है कि आरोपी व्यक्तियों के पास उस स्थान का विशेष अधिकार था जहां घटना हुई थी या जहां उन्हें आखिरी बार मृतक के साथ देखा गया था, और किसी तीसरे पक्ष द्वारा उस स्थान पर किसी भी घुसपैठ की कोई संभावना नहीं थी, तो अपेक्षाकृत व्यापक समय अंतराल अभियोजन मामले को प्रभावित नहीं करेगा।"

19. हम, **(2018) 16 SCC 102** में प्रतिवेदित माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा , **रवि बनाम कर्नाटक राज्य**, मामले में दिए गए निर्णय का भी उल्लेख और उस पर भरोसा

करना चाहेंगे जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 3 और 5 में निम्नलिखित टिप्पणी की हैः

> “3.अपीलार्थी-अभियुक्त और मृतक के साथ सुमा (अ.सा- 1) और रामा नायक (अ.सा.-2), 26.12.2004 को एक साथ थे, सटीक समय दोपहर लगभग 1:30 बजे था। चार (4) दिनों के अंतराल के बाद अर्थात 30-12-2004 को शव बरामद किया गया। पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट से पता चला कि मौत पोस्टमॉर्टम के समय से 30 घंटे पहले हुई थी। इसलिए, चिकित्सा साक्ष्य इस तथ्य का संकेत देंगे कि शव 26-12-2004 के दोपहर 1:30 बजे के लगभग दो (2) दिनों के बाद बरामद किया गया था।
>
> 5.“आखिरी बार एक साथ देखा जाना निश्चित रूप से एक आरोपी के खिलाफ मजबूत परिस्थितिजन्य साक्ष्य का एक भाग है। तथापि, जैसा कि इस न्यायालय के कई निर्णयों में अभिनिर्धारित किया गया है, मृत्यु की घटना और जब अभियुक्त को अंतिम बार मृतक के साथ देखा गया था, के बीच का समय-अंतराल अपराध का निष्कर्ष निकालने की अनुमति देने के लिए यथोचित रूप से करीब होना चाहिए। जब समय-अंतराल काफी बड़ा होता है, जैसा कि वर्तमान मामले में है, तो अदालत के लिए पुष्टि की तलाश करना उचित होगा। वर्तमान मामले में, कोई पुष्टि नहीं हो रही है। किसी भी अन्य परिस्थिति के अभाव में जो अपीलार्थी-अभियुक्त को कथित अपराध से जोड़ सकती है, सिवाय इसके कि जैसा कि ऊपर संकेत दिया गया है और "अंतिम बार एक साथ देखा गया" की परिस्थिति की किसी भी पुष्टि के अभाव में, हमारा विचार है कि अपीलार्थी-अभियुक्त की उनके खिलाफ कथित अपराध में संलिप्तता के संबंध में एक उचित संदेह पर विचार किया जा सकता है। साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106 के तहत बोझ उपरोक्त तथ्य स्थिति में नहीं बदलेगा, एक ऐसी स्थिति जिस पर इस न्यायालय ने मल्लेशप्पा बनाम कर्नाटक राज्य [मल्लेशप्पा बनाम कर्नाटक राज्य, (2007) 13 एस. सी. सी. 399:(2009) 2 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 394] जिसमें मोहिबुर रहमान बनाम असम राज्य [मोहिबुर रहमान बनाम असम राज्य, (2002) 6 एस. सी. सी. 715: 2002 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1496] में इस न्यायालय का पूर्व दृष्टिकोण उद्धृत किया गया है। मोहिबुर रहमान बनाम असम राज्य, (2002) 6 एस. सी. सी. 715 में उक्त दृष्टिकोण 2002 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1496] को नीचे लाभप्रद रूप से उद्धृत किया जा सकता हैः (मल्लेशप्पा मामला [मल्लेशप्पा बनाम कर्नाटक राज्य, (2007)

13 एस. सी. सी. 399: (2009) 2 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 394], एस. सी. सी. पृष्ठ 408, कंडिका 23)

"23. ... '10. आखिरी बार एक साथ देखे जाने की परिस्थिति अपने आप में यह निष्कर्ष नहीं निकालती है कि यह आरोपी ही था जिसने अपराध किया था।अभियुक्त और अपराध के बीच संबंध स्थापित करने के लिए कुछ और होना चाहिए।ऐसे मामले हो सकते हैं जहां, आरोपी के मृतक के साथ आखिरी बार देखे जाने की घटना और मृत्यु के तथ्य के बीच स्थान और समय की निकटता के कारण, एक तर्कसंगत मस्तिष्क को एक अप्रतिरोध्य निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए राजी किया जा सकता है

कि या तो अभियुक्त को यह बताना चाहिए कि पीड़ित की मृत्यु कैसे और किन परिस्थितियों में हुई या उसे हत्या के लिए स्वयं उत्तरदायी होना चाहिए। वर्तमान मामले में समय और स्थान की ऐसी कोई निकटता नहीं है। जैसा कि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है कि जिस तारीख को मृतक को आखिरी बार आरोपी के साथ देखा गया था, उसके लगभग 14 दिन बाद शव बरामद किया गया है। दोनों स्थानों के बीच की दूरी लगभग 30-40 किमी है। दो अभियुक्त व्यक्तियों के मृतक के साथ चले जाने और इस प्रकार आखिरी बार एक साथ देखे जाने की घटना (द्वारा - लिलिमा राजबोंगशी, अ.सा.- 6) समय या स्थान के संदर्भ में पीड़ित की मृत्यु के साथ इतनी निकटता नहीं रखती है। डॉ. रतन सीएच दस के अनुसार मृत्यु 9-2-1991 से 5 से 10 दिन पहले हुई थी। चिकित्सा साक्ष्य स्थापित नहीं करता है, और यह मानने के लिए कोई अन्य प्रमाण उपलब्ध नहीं है कि मृतक की मृत्यु 24-1-1991 को या उसके तुरंत बाद हुई थी। जहाँ तक अभियुक्त मोहिबुर रहमान की बात है, यह उसके खिलाफ उपलब्ध रिस्थितिजन्य साक्ष्य का एकमात्र भाग है। हम पहले ही जब्ती के बारे में सबूतों पर चर्चा कर चुके हैं और यह मानते हैं कि उसे किसी भी जब्ती से नहीं जोड़ा जा सकता है। केवल इसलिए कि उसे अंतिम बार मृतक के साथ उसकी मृत्यु से कुछ अनिश्चित दिनों पहले देखा गया था, उसे मृतक की मृत्यु का कारण बनने के अपराध के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। जहां तक भा.द. वी. की धारा 201 के तहत अपराध का संबंध है, उसके खिलाफ नाम के लायक कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं है। वह बरी होने का हकदार है।' (मोहिबुर रहमान [मोहिबुर रहमान बनाम असम राज्य, (2002) 6 एससीसी 715:2002 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1496], एस. सी. सी. पृष्ठ . 720-21, कंडिका 10) "

20.**(2020) 14** SCC **750** में प्रतिवेदित, **शैलेंद्र राजदेव पासवान एवं अन्य बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य**, मामले में जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 17 में निम्नलिखित टिप्पणी की हैः

> "17. अब तक यह पूर्णरूपेण स्थापित है की परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित एक मामले में न्यायालयों के पास एक कर्तव्यनिष्ठ दृष्टिकोण होना चाहिए और दोषसिद्धि केवल तभी दर्ज की जानी चाहिए जब श्रृंखला के सभी संबंध अभियुक्त के अपराध की ओर इशारा करते हुए पूर्ण हों।प्रत्येक कड़ी जब तक एक श्रृंखला बनाने के लिए एक साथ नहीं जुड़ी होती है, तब तक संदेह का संकेत मिल सकता है, लेकिन यह अपने आप में सबूत का स्थान नहीं ले सकता है और आरोपी को दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त नहीं होगा।"

21. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए उपरोक्त निर्णयों को ध्यान में रखते हुए, यदि वर्तमान मामले के तथ्यों की सावधानीपूर्वक जांच की जाती है, जैसा कि यहां ऊपर चर्चा की गई है, तो हमारा विचार है कि अभियोजन पक्ष उस श्रृंखला को साबित करने में विफल रहा है जिससे यह स्थापित किया जा सकता है कि वर्तमान अपीलकर्ता-अभियुक्त ने केवल कथित अपराध किया है और किसी अन्य ने नहीं किया है।

22. यह भी ध्यान देने योग्य है कि अपीलार्थियों-अभियुक्तों के आगे के बयान दर्ज करते समय, अपीलार्थियों-अभियुक्तों के खिलाफ दोषपूर्ण परिस्थितियों को विशेष रूप से उनके सामने नहीं रखा गया था। संहिता की धारा 313 के तहत दर्ज अपीलार्थियों-अभियुक्तों के आगे के बयान कागजी पुस्तक की टंकित की गई प्रति के पृष्ठ 39-40 पर प्रस्तुत किए जाते हैं।

23. **राज कुमार @ सुमन** (ऊपर) के मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 13 से 16 में निम्नलिखित टिप्पणी की हैः

> *"**13.** फिर हम **एस. हरनाम सिंह बनाम राज्य (दिल्ली प्रशासन)** के मामले में इस अदालत के फैसले पर आते हैं। अनुच्छेद 22 में, इस न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित कियाः*
>
> > *"**22.** आपराध प्रक्रिया संहिता 1898, की धारा 342, अदालत पर यह कर्तव्य डालती है कि वह किसी भी जांच या मुकदमे में आरोपी से सवाल पूछे ताकि वह उसके*

खिलाफ साक्ष्य में दिखाई देने वाली किसी भी परिस्थिति को स्पष्ट कर सके। ***यह एक आवश्यक परिणाम के रूप में इस प्रकार है कि अभियुक्त के खिलाफ साक्ष्य में दिखाई देने वाली प्रत्येक भौतिक परिस्थिति को विशेष रूप से, स्पष्ट रूप से और अलग से उसके सामने रखा जाना आवश्यक है। ऐसा करने में विफलता एक गंभीर अनियमितता के बराबर है जो मुकदमे को दूषित करती है यदि ऐसा दिखता है कि इसने आरोपी को पूर्वाग्रहित किया है। यदि अनियमितता, वास्तव में, न्याय की विफलता का कारण नहीं बनती है, तो संहिता की धारा 537 के तहत इसका उपचार किया जा सकता है।"***

(जोर दिया गया)

14. *फिर हम* ***समसुल हक*** *के मामले में एक निर्णय पर आते हैं जिस पर अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने भरोसा जताया था । अनुच्छेद 21 से 23 में, इस न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया:*

*"**21.** हमारे विचार में, सबसे महत्वपूर्ण पहलू जो अभियोजन पक्ष के मामले की दुष्परिणति को अवश्यम्भावी बनाता है, वह न्यायालय द्वारा मामले को अभियुक्त 9 के सामने रखने , और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत बयान दर्ज करने का तरीका है । कम से कम कहने के लिए तो यह निकृष्ट है।*

22. यह कहना स्वाभाविक सी बात है कि विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा उल्लिखित निर्णयों को ध्यान में रखते हुए, अभियुक्त के समक्ष दोषारोपण करने वाली सामग्री रखी जानी चाहिए ताकि अभियुक्त को अपना बचाव करने का उचित अवसर मिले। यह "दूसरे पक्ष की भी बात सुनने " के सिद्धांतों की मान्यता में है। *इसके अलावा विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा उल्लिखित निर्णय, हम उपयोगी रूप से, अशरफ अली बनाम असम राज्य [अशरफ अली बनाम असम राज्य, (2008) 16 एस. सी. सी. 328 : (2010) 4 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 278] में इस न्यायालय के निर्णय का उल्लेख कर सकते हैं। प्रासंगिक टिप्पणियां निम्नलिखित अनुच्छेदों में हैं: (एस. सी. सी पृष्ठ .334, अनु. 21-22)*

"21. संहिता की धारा 313 न्यायालय के लिए इस कर्तव्य का प्रावधान करती है कि वह आरोपी को उसके विरुद्ध साक्ष्य में दिखाई देने वाली किसी भी परिस्थिति को समझाने में सक्षम बनाने के उद्देश्य से पूछताछ या परीक्षण प्रश्न पूछे। यह आवश्यक

परिणाम के रूप में इस प्रकार है कि अभियुक्त के विरुद्ध साक्ष्य में दिखाई देने वाली प्रत्येक भौतिक परिस्थिति को विशेष रूप से, स्पष्ट रूप से और अलग से उसके सामने रखा जाना आवश्यक है और ऐसा करने में विफलता एक गंभीर अनियमितता के समान है जो मुकदमे को दूषित करती है, यदि यह दर्शाया जाता है कि अभियुक्त पूर्वाग्रह से ग्रस्त था।

22. संहिता की धारा 313 का उद्देश्य न्यायालय और अभियुक्त के बीच सीधा संवाद स्थापित करना है। यदि साक्ष्य में अभियुक्त के विरुद्ध एक बिंदु महत्वपूर्ण है, और दोषसिद्धि उसी पर आधारित होनो है, तो यह सही और यथोचित है कि अभियुक्त से मामले के बारे में पूछताछ की जानी चाहिए और उसे समझाने का अवसर दिया जाना चाहिए। *जहाँ अभियोजन पक्ष के साक्ष्य में एक दोषारोपण सामग्री पर विचारण न्यायालय द्वारा कोई विशिष्ट प्रश्न नहीं रखा गया है, यह मुकदमे को दूषित कर देगा। बेशक, ये सभी इस बात पर निर्भर हैं कि क्या वे न्याय की विफलता या पूर्वाग्रह का कारण बने हैं। इस न्यायालय ने, दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 की धारा 342 (संहिता की धारा 313 के अनुरूप) पर विचार करते हुए ,एस. हरनाम सिंह बनाम राज्य (दिल्ली प्रशासन) [एस. हरनाम सिंह बनाम राज्य (दिल्ली प्रशासन), (1976) 2 एससीसी 819:1976 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 324] में भी इसी तरह का विचार व्यक्त किया। निचली अदालत द्वारा अभियुक्त को उसके प्रासंगिक पहलुओं में दोषारोपण सामग्री का सांकेतिक अभाव अभियोजन मामले की भेद्यता को बढ़ाता है। धारा 313 के तहत अभियुक्त का बयान* दर्ज करना एक उद्देश्यहीन प्रक्रिया नहीं है।"

23. *उपरोक्त टिप्पणियाँ करते समय, इस न्यायालय ने, शिवाजी साहबराव बोबडे बनाम महाराष्ट्र राज्य [(शिवाजी साहबराव बोबडे बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1973) 2 एस. सी. सी. 793 : 1973 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1033], मामले में दिए गए तीन न्यायाधीशों की पीठ के अपने पहले के निर्णय का भी उल्लेख किया, जिसने अभियोजन पक्ष के साक्ष्य में अभियुक्त के खिलाफ उपस्थित होने वाली एक महत्वपूर्ण परिस्थिति पर प्रश्न रखने में चूक के दुष्परिणाम तथा इस आवश्यकता पर विचार किया कि अभियुक्त का ध्यान प्रत्येक दोषारोपण सामग्री की ओर आकर्षित किया जाना चाहिए ताकि वह इसे समझाने में सक्षम हो सके। आम तौर पर, ऐसी स्थिति में, ऐसी सामग्री जो अभियुक्त के सामने नहीं रखी जाती है, उसे छोड़ दिया जाना*

चाहिए। निःसंदेह, यह मान्य है कि , जहां दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत एक मात्र औपचारिक परीक्षण होती है, वहां मामला विचारण न्यायालय को इस निर्देश के साथ प्रेषित करने योग्य होता है, कि उस चरण से फिर से प्रयास करे जहाँ से अभियोजन बंद किया गया था [शिवाजी साहबराव बोबडे बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1973) 2 एस. सी. सी. 793:1973 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1033]"

(जोर दिया गया)

15. *प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने भी* ***वाहिता बनाम तमिलनाडु राज्य*** *के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया।यह मामला दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत आरोपी से पूछताछ करते समय की गई चूक के परिणामों से संबंधित नहीं है। यह केवल एक आकस्मिकता से संबंधित है जहां अभियोजन पक्ष के गवाहों के साक्ष्य को चुनौती नहीं दी जाती है।अब हम* ***सत्यवीर सिंह*** *के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर आते हैं, जिस पर प्रत्यर्थी के विद्वान वकील ने भरोसा किया था। निर्णय में कहा गया है कि अपील में पहली बार दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 का पालन न करने के आधार पर दोषसिद्धि की चुनौती पर तब तक विचार नहीं किया जा सकता जब तक कि आरोपी यह प्रदर्शित नहीं करता कि उसके प्रति पूर्वाग्रह पैदा किया गया है। यदि जल्द से जल्द कोई आपत्ति उठाई जाती है, तो संबंधित अभियुक्त का अतिरिक्त बयान दर्ज करके दोष का उपचार किया जा सकता है। और उक्त निर्णय का सार यह है कि इतनी लंबी देरी यह तय करने में एक कारक हो सकती है कि मामला दूषित है या नहीं। इसके अलावा, विस्तृत पीठ का,* ***शिवाजी साहबराव बोबडे*** *के मामले में दिए गए निर्णय में यह बाध्यकारी है कि यदि अभियुक्त के प्रति पूर्वाग्रह पैदा होता है जिसके परिणामस्वरूप न्याय की विफलता होती है, तो मुकदमा दूषित हो जाएगा।*

16. *इस न्यायालय द्वारा निरंतर निर्धारित कानून को संक्षेप में निम्नानुसार प्रस्तुत किया जा सकता हैः*

(i) यह विचारण न्यायालय का कर्तव्य है कि वह अभियुक्त के विरुद्ध साक्ष्य में सामग्री जिसके आधार पर अभियोजन पक्ष उसकी दोषसिद्धि की मांग कर रहा है;

(ii) धारा 313 के तहत अभियुक्त की परीक्षण का उद्देश्य अभियुक्त को साक्ष्य में उसके विरुद्ध पेश होने वाली किसी भी परिस्थिति की व्याख्या करने में सक्षम बनाना है।

(ग) न्यायालय को आम तौर पर उन भौतिक परिस्थितियों से बचना चाहिए जो अभियुक्त विशेष के मामले पर विचार करते समय अभियुक्त के समक्ष नहीं रखी जाती है।

(iv) अभियुक्त के सामने भौतिक परिस्थितियों को रखने में विफलता एक गंभीर अनियमितता है। और यदि यह दर्शाया जाता है कि आरोपी पूर्वाग्रहित हुआ है तो यह मुकदमे को दूषित कर देगा।

(v) यदि अभियुक्त के सामने भौतिक परिस्थिति रखने में किसी भी अनियमितता के परिणामस्वरूप न्याय की विफलता नहीं होती है, तो यह एक उपचार योग्य दोष बन जाता है। हालाँकि, यह तय करते समय कि क्या दोष को ठीक किया जा सकता है, एक विचार घटना की तारीख से समय के बीतने पर होगा;

(vi) यदि ऐसी अनियमितता उपचार योग्य है, तो अपीलीय न्यायालय भी अभियुक्त से उस भौतिक परिस्थिति पर सवाल कर सकता है जो उसके सामने नहीं रखी गई है; और

(vii) ऐसे मामले में, मामले को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत संबंधित आरोपी का पूरक बयान दर्ज करने के चरण से विचारण न्यायालय को भेजा जा सकता है।

(viii) इस प्रश्न का निर्णय करते समय कि क्या चूक के कारण अभियुक्त के प्रति पूर्वाग्रह पैदा हुआ है, आपत्ति में विलम्ब उन कई कारकों में से एक है जिन पर विचार किया जाना चाहिए।"

24. इस स्तर पर, हम माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा, **(2020) 10 एस. सी. सी. 108** में सूचित किया गया **महेश्वर तिग्गा बनाम झारखंड राज्य** के मामले में दिए गए निर्णय का भी उल्लेख और उस पर भरोसा करना चाहते हैं, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 7 और 8 में निम्नलिखित टिप्पणी की हैः

"7. द.प्र.स. की धारा 313 के तहत अभियुक्त के परीक्षण के एक सामान्य अवलोकन से पता चलता है कि यह अत्यंत औपचारिक एवं अरुचिकर प्रकृति का है। अपीलार्थी से केवल तीन संक्षिप्त प्रश्न निम्नलिखित रूप में पूछे गए थे जिन्हें उन्होंने अस्वीकार कर दिया:

" प्रश्न 1.आपके खिलाफ एक गवाह है कि जब सूचिका वी. अंशुमाला टिग्गा स्कूल जा रही थी तो आप टोमरा नहर के पास छिपे हुए थे और सूचिका अकेला पाकर आपने उसे चाकू की नोक पर निर्वस्त्र होने के लिए मजबूर किया और उसके साथ बलात्कार किया।

प्रश्न 2.बलात्कार के बाद जब सूचिका अपने माता-पिता को घटना के बारे में सूचित करने के लिए रोते हुए उसके घर गई और जब सूचिका के माता-पिता घटना के बारे में पूछताछ करने के लिए आपके पास आए, तो आपने उनसे कहा कि "अगर मैंने बलात्कार किया है तो मैं उसे अपनी पत्नी के रूप में रखूंगा"।

प्रश्न 3. आपके निर्देश पर, सूचिका के माता-पिता ने सूचिका का "लोहा पानी" समारोह किया, जिसमें सूचिका के साथ-साथ आपके माता-पिता भी मौजूद थे, उक्त समारोह में आपके माता-पिता ने सूचिका को एक साड़ी और एक ब्लाउज उपहार में दिया था और सूचिका के माता-पिता ने भी आपको कुछ कपड़े उपहार में दिए थे।"

8. यह पूर्णरूपेण स्थापित है कि द.प्र.स. की धारा 313 के तहत किसी आरोपी के सामने नहीं रखी गई परिस्थितियों का उपयोग उसके विरुद्ध नहीं किया जा सकता है, और इसे विचार से परे रखा जाना चाहिए। आपराधिक मुकदमे में, एक अभियुक्त के सामने रखे गए प्रश्नों का महत्व प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के लिए बुनियादी है क्योंकि यह उसे न केवल अपना बचाव प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान करता है, बल्कि उसके विरुद्ध दोषपूर्ण परिस्थितियों की व्याख्या करने का भी अवसर प्रदान करता है। एक अभियुक्त द्वारा उठाया गया संभावित बचाव उचित संदेह से परे प्रमाण की आवश्यकता के बिना आरोप का खंडन करने के लिए पर्याप्त है।"

25. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए उपरोक्त निर्णय से यह कहा जा सकता है कि यह विचारण न्यायालय का कर्तव्य है कि वह अभियुक्त के खिलाफ साक्ष्य में दिखाई देने वाली प्रत्येक भौतिक परिस्थिति को विशेष रूप से, स्पष्ट रूप से और अलग से रखे।भौतिक परिस्थिति का अर्थ है वह परिस्थिति या सामग्री जिसके आधार पर अभियोजन पक्ष उसकी दोषसिद्धि की मांग कर रहा है। संहिता की धारा 313 के तहत अभियुक्तों के परीक्षण का उद्देश्य अभियुक्त को साक्ष्य में उनके विरुद्ध प्रस्तुत होने वाली किसी भी परिस्थिति की व्याख्या करने में सक्षम बनाना है।अभियुक्त के सामने भौतिक परिस्थितियों को रखने में विफलता एक गंभीर अनियमितता तुल्य है और यह मुकदमे को दूषित कर देगा यदि यह दर्शाया जाता है कि उसने अभियुक्त को पूर्वाग्रहित किया है।

26. उपरोक्त निर्णय को ध्यान में रखते हुए, एक बार फिर, यदि संहिता की धारा 313 के तहत दर्ज अभियुक्त के बयान की जांच की जाती है, तो हमारा विचार है कि न्यायालय ने अभियुक्त के सामने उन आपत्तिजनक परिस्थितियों को नहीं रखा है जिनके परिणामस्वरूप अपीलकर्ताओं के प्रति पूर्वाग्रह पैदा हुआ है जैसा की अपीलार्थी-अभियुक्त के विद्वान अधिवक्ता तथा *न्यायमित्र* द्वारा प्रस्तुत किया गया।

27. इस स्तर पर, हम माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा,**(2019) 3 एस. सी. सी. 289** में प्रतिवेदित **रीना हजारिका बनाम असम राज्य** के मामले में **,** दिए गए निर्णय का उल्लेख करना चाहते हैं और उस पर भरोसा करना चाहते हैं **,** जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 9 में निम्नलिखित टिप्पणी की हैः

> "9. परिस्थितिजन्य साक्ष्य की अनिवार्यताएं उदाहरणों द्वारा अच्छी तरह से स्थापित हैं और हम इसे दोहराना और आदेश पर अनावश्यक रूप से बोझ डालना आवश्यक नहीं मानते हैं। यह देखने के लिए पर्याप्त है कि परिस्थितिजन्य साक्ष्य के मामले में अभियोजन पक्ष को परिस्थितियों की श्रृंखला के संबंधों में निरंतरता स्थापित करने की आवश्यकता होती है, ताकि आरोपी के हमलावर होने की एकमात्र और अपरिहार्य निष्कर्ष पर पहुंचा जा सके, जो आरोपी की निर्दोषता के साथ संगत किसी अन्य परिकल्पना की संभावना के साथ असंगत या विरोधाभासी हो। किसी मामले में तथ्यों और साक्ष्य के बिना केवल अंतिम देखे गए सिद्धांत का आह्वान, साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106 के तहत अभियुक्त पर जिम्मेदारी स्थानांतरित करने के लिए पर्याप्त नहीं होगा जब तक कि अभियोजन पक्ष पहले एक प्रथम दृष्टया मामला स्थापित नहीं करता है। यदि परिस्थितियों की श्रृंखला में संबंध पूर्ण नहीं हैं, और अभियोजन पक्ष प्रथम दृष्टया एक मामला स्थापित करने में असमर्थ है, इस संभावना को खुला छोड़ते हुए कि घटना किसी अन्य तरीके से हुई होगी, तो जिम्मेदारी अभियुक्त पर नहीं जाएगी, और संदेह का लाभ देना होगा।"

28. उपरोक्त निर्णय से यह कहा जा सकता है कि यदि अभियोजन पक्ष *प्रथम दृष्टया* मामला स्थापित करने में असमर्थ है और इस संभावना को खुला छोड़ देता है कि घटना किसी अन्य तरीके से हुई होगी, तो जिम्मेदारी अभियुक्त पर नहीं जाएगी और संदेह का लाभ अभियुक्त को देना होगा। इसके अलावा, केवल अंतिम देखे गए सिद्धांत का आह्वान, साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के तहत अभियुक्त पर जिम्मेदारी स्थानांतरित करने के लिए तथ्य और साक्ष्य पर्याप्त नहीं होंगे जब तक कि अभियोजन पक्ष पहले एक प्रथम दृष्टया मामला स्थापित नहीं करता है।

29. उपरोक्त निर्णयों को ध्यान में रखते हुए, यदि वर्तमान मामले के तथ्यों की जांच की जाती है, तो हमारा विचार है कि अभियोजन पक्ष ने साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 में निहित प्रावधानों पर गलत तरीके से भरोसा किया है।

30. हमने अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत पूरे साक्ष्य की फिर से सराहना की है और हमारा विचार है कि अभियोजन पक्ष अपीलार्थियों-अभियुक्त-दोषियों के खिलाफ मामले को उचित संदेह से परे साबित करने में विफल रहा है और इसलिए, विचारण न्यायालय ने इन दोनों अपीलार्थियों-अभियुक्तों के खिलाफ दोषसिद्धि का आदेश पारित करते समय गंभीर त्रुटि की है।

31. तदनुसार, ये दोनों अपीलें स्वीकार की जाती हैं। 2009 का खोदाबंदपुर थाना कांड संख्या 53 से उत्पन्न 2009 के सत्र वाद सं. 1091, में अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश-7, बेगुसराय द्वारा पारित दोषसिद्धि का विवादित निर्णय और सजा का आदेश दिनांक 17.03.2015 अपास्त किया जाता है। अपीलार्थी, अर्थात् 2015 की आपराधिक अपील (ख.पी.) सं. 521 में ब्रह्मदेव साहनी और 2015 की आपराधिक अपील (ख.पी.) सं. 418 में परमानंद साह को विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा उनके खिलाफ लगाए गए आरोपों से बरी किया जाता है। चूँकि अपीलार्थी, अर्थात् परमानंद साह जमानत पर है, उसे अपने जमानत की देनदारियों से मुक्त किया जाता है और चूँकि अपीलार्थी, अर्थात् ब्रह्मदेव साहनी जेल में है, उसे तुरंत मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है, यदि किसी अन्य मामले में उसकी उपस्थिति की आवश्यकता नहीं है।

32. इस स्तर पर, हम इस न्यायालय को विद्वान *न्यायमित्र* सुश्री सूर्य नीलांबरी द्वारा प्रदान की गई सहायता की सराहना करना चाहेंगे। हम पटना उच्च न्यायालय की कानूनी सेवा समिति को निर्देश देते हैं कि वह विद्वान न्यायमित्र को जिन्होंने हमें सहायता प्रदान की है उन्हें 5,000/- रुपये (पांच हजार रुपये) का भुगतान करे।

33. यह भी स्पष्ट किया जाता है कि यदि दोनों अपीलों के अपीलकर्ताओं ने जुर्माने की राशि जमा कर दी है, तो उन्हें वह राशि वापस कर दी जाए।

(विपुल एम. पंचोली, न्यायमूर्ति)

(चंद्र शेखर झा, न्यायमूर्ति)

संजय/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।